AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

कनिष्क–सातवाहन किवदंती का ऐतिहासिक आधार

ORIGINAL ARTICLE

Author
सुमित कुमार
शोधार्थी
स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय
हजारीबाग, भारत

शोध सार

कुषाण सम्राट कनिष्क का राज्य प्रायः 78 ई. से शुरू होकर 23 वर्षों के शासन काल तक को माना गया है। ऐसा भी संभव है, कि उसका शासन दूसरी शताब्दी ई. के प्रथम दशक तक रहा हो। वैसे वशिष्टिपुत्र पुलुमावी जो गौतमीपुत्र सातकर्णी का उत्तराधिकारी था उसका राज्यारोहण पहली शताब्दी ई. के समाप्त होने वाले वर्षों से लेकर दूसरी शताब्दी ई. के प्रथम दशक तक माना जा सकता है। उसका शासन काल भी 24 वर्षों का था और इसलिए द्वितीय शताब्दी के प्रथम दो दशकों में उसका शासन था। इस अनुमान के अनुसार गौतमी पुत्र सातकर्णी अथवा वशिष्टिपुत्र पुलुमावि, कनिष्क प्रथम के लगभग समकालीन थे। चीनी भाषा में शामिल होने के पहले भी कनिष्क नाम के और सातवाहन नाम के इन दो राजाओं की कथा उत्तर भारत में प्रचलित रही होगी। जैसा कि प्रायः सभी किवंदतियों में कहा जा सकता है यह कथा भी कही–न–कही ऐतिहासिक तथ्यों पर बनी होगी। एक ऐतिहासिक तथ्य जो अनिवार्य रूप से निकाला जा सकता है वह यह है, कि कनिष्क और सातवाहन के बीच किसी प्रकार का संघर्ष रहा होगा जो उत्तर भारत में कालांतर में बनने वाली कथाओं का रूप ले सका।

मुख्य शब्द

कनिष्क, सातवाहन, वांग–हुवान–जू, मुजम्मालूत–तवारिख, अलबेरूनी, राजतरंगिणी.

कुषाण सम्राट कनिष्क–1 का राज्य प्रायः 78 ई. से शुरू होकर 23 वर्षों के शासन काल तक को माना गया है।[1] सातवाहन सम्राट गौतमी पुत्र सातकर्णी का भी शासन 24 वर्षों का था और यह पहली शताब्दी ई. के अंतिम 25 वर्षों में कभी रहा होगा। ऐसा भी संभव है, कि उसका शासन दूसरी शताब्दी ई. के प्रथम दशक तक रहा हो। वैसे वशिष्टिपुत्र पुलुमावी जो गौतमीपुत्र सातकर्णी का उत्तराधिकारी था उसका राज्यारोहण पहली शताब्दी ई. के समाप्त होने वाले वर्षों से लेकर दूसरी शताब्दी ई. के प्रथम दशक तक माना जा सकता है। उसका शासन काल भी 24 वर्षों का था और इसलिए द्वितीय शताब्दी के प्रथम दो दशकों में उसका शासन था।[2] इस अनुमान के अनुसार गौतमी पुत्र सातकर्णी अथवा वशिष्टिपुत्र पुलुमावि, कनिष्क प्रथम के लगभग समकालीन थे। नासिक के उक्त अभिलेख में ही दूसरे अनुच्छेद में यह कहा गया है, कि गौतमीपुत्र सातकर्णी परिचत (पर्वत) का स्वामी था और वह अपरांत, कुक्कुट, सूरत, अकरा और अवन्ति का भी स्वामी था।[3] परिचत या परियत आधुनिक विंध्य श्रृंखला में भोपाल की श्रृंखला को कहा गया है जिसमें अरावली पर्वत भी शामिल है।[4] अपरांत को उत्तरी कोंकण और नासिक तथा पूना जिलों से चिन्हित किया जाता है।[5] डी.सी. सरकार ने अपरांत को उत्तर काठियावाड़ से जोड़ना चाहा है, जिसका

खंडन किया जाता रहा है।[6] जूनागढ़ अभिलेख में 139–150 ई. में कुक्कुट को अनार्त्त से समझा गया है जिसमें उत्तरी काठियावाड़ और आस–पास के इलाके शामिल थे और सुराष्ट्र में कम से कम दक्षिण काठियावाड़ शामिल था। गौतमी पुत्र सातकर्णी के अधीन अरावली क्षेत्र, उत्तरी कोंकण दक्षिण काठियावाड़ (सुराष्ट्र का एक हिस्सा) तथा उत्तरी काठियावाड़ के स्वामी होने का दावा किया गया है। सीराष्ट्रीन को सुराष्ट्र से जोड़ा जा सकता है।[7] और इस स्रोत के अनुसार सुराष्ट्र केवल दक्षिण काठियावाड़ तक सीमित नहीं रहा होगा बल्कि उत्तरी काठियावाड़ में सिंधु प्रदेश के मुहाने तक का क्षेत्र उसमें आता होगा। ऐसा संभव है, कि सातवाहन शासक के अधीन जो सुराष्ट्र था वह दक्षिण पूर्व सिंध के कुछ हिस्से को भी अपने में जोड़ता होगा। दूसरी ओर कुषाणों के द्वारा आधुनिक सिंध क्षेत्र पर पूर्ण नियंत्रण की बात कही जाती है। हाउ–हान–शु में इस क्षेत्र पर विम कडफिसेस के आधिपत्य का वर्णन है।[8] इस प्रकार प्राचीन सिंधु प्रदेश निचले सिंधु प्रदेश के पश्चिमी हिस्से तक फैला हुआ था और इसके पूर्व का भाग भी कुषाणों के अधीन रहा होगा।[9] कम से कम वासुदेव–1 तक निचला सिंधु प्रदश कुषाण सम्राटों के अधीन रहा।[10] वैसे भी विम कडफिसेस के बाद कनिष्क और कनिष्क के बाद वासुदेव–1 का शासन रहा। सुई विहार का अवशेष बहावलपुर शहर के दक्षिण पश्चिम में 16 मिल पर अवस्थित है। यहां से एक ताम्र पत्र अभिलेख प्राप्त हुआ है जो कनिष्क के राज्यारोहण के बाद 11वें वर्ष में निर्गत किया गया था।[11] यह शक संवत के अनुसार निर्धारित किया जा सकता है।[12] इस ताम्र पत्र अभिलेख से यह भी सिद्ध होता है, कि सुई विहार वाला क्षेत्र कनिष्क के काल में कुषाण साम्राज्य का हिस्सा था। सौविर या सुराष्ट्र के उत्तरी सीमा का विश्लेषण करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि सुई विहार उस हिस्से में पड़ता था। या उसके बहुत निकट वाले हिस्से में। ई. सन के प्रारंभिक वर्षों में सुराष्ट्र क्षेत्र में निचले सिंधु प्रदेश का पूर्वी हिस्सा पड़ता था जिस हिस्से को बाद में अंग्रेजों के द्वारा जोड़ कर सिंध प्रांत का निर्माण किया गया।[13] इस तथ्य के अनुसार भी निचले सिंधु प्रदेश के उत्तरी हिस्से पर कनिष्क–1 के नियंत्रण की बात सिद्ध होती है। ऐसा वर्णन इसलिए तर्क संगत है कि सिंध प्रदेश ही वह क्षेत्र रहा होगा जहां पर कभी कनिष्क–1 और सातवाहन सम्राट के बीच संघर्ष की सिथति बनी होगी और यह सातवाहन सम्राट या तो गौतमी पुत्र सातकर्णी या उसका उत्तराधिकारी वशिष्ठिपुत्र पुलमावि रहा होगा।

लेवी ने दक्कन में कनिष्क के शासन के विषय में वर्णन के क्रम में एक प्राचीन आख्यान की भी चर्चा की है।[14] दरअसल उसमें यह संदर्भ चीन के यू–यांग–शा–शू के वृतांत से लिया है।[15] यू–यांग–शा–शू का लेखक तुवान चेंग चे था, जिसने 860 ई. में यह वृत्तांत लिखा।[16] इस पुस्तक के 20 अध्याय है और उनमें विदेशी देशों के विषय में भी लिखा गया है। इस पुस्तक के ग्यारहवें अध्याय में कनिष्क से जुड़ी एक कहानी आती है। ह्यूबर का मानना है कि कनिष्क से जुड़ी कथा उसने वांग–हुवान–जू के काल में भारत भेजे गए राजनयिक मंडलों के द्वारा प्राप्त की गई सूचना के आधार पर लिखा गया। इस पुस्तक के सातवें अध्याय में मगध के शासक के साथ रह रहे एक भारतीय विद्वान की भी चर्चा की गई है जिसको वांग–हूवान–जू के द्वारा चीन की राधानी लाया गया था।[17] ध्यान देने योग्य तथ्य यह है, कि वांग–हूवान–जू के पूर्व के किसी भी चीनी स्रोत में इस कथा का उल्लेख नहीं किया गया है। दूसरी ओर भारत में भी इस कथा से मिलती–जुलती कनिष्क और किसी सातवाहन राजा से जुड़ी कई मिलती–जुलती कथाएं प्रचलित है किन्तु इनमें से कोई भी वांग–हूवान–जू के पहले की नहीं है। वांग–हूवान–जू के द्वारा इसके अतिरिक्त भी कनिष्क से जुड़ी हुई कुछ एक वृत्तांत उपलब्ध है।[18] कथा कुछ इस प्रकार से है कि – पूर्व में गांधार (कान्तो) पर एक सक्षम और चतुर सम्राट कनिष्क का शासन था।[19] उसने बहुत से प्रदेशों पर आक्रमण किया और उसका सामना किसी ने नहीं किया। एक बार उसके भारत में (तीएन–चू)[20] किए गए एक आक्रमण के दौरान किसी के द्वारा उसको दो किमती वस्त्र उपहार में उनको दिए गए जिनमें से एक को उसने अपने लिए रखा और दूसरे को रानी के लिए। रानी उस वस्त्र को पहन कर राजा के पास गई उस वस्त्र को पहनने के बाद उसके वक्षस्थल पर एक हथेली का निशान था जो भगवरंग में था। इस निशान को देखकर राजा क्रोधित हो गया। राजा ने रानी से क्रोधित होकर इस विषय में आशंका प्रकट किया। रानी ने उत्तर दिया कि यह वस्त्र वही है जिसको राजा ने भेंट किया था। राजा ने कोषाध्यक्ष से अपनी आशंका प्रकट की उसने उत्तर दिया कि इस कोटि के सभी वस्त्रों पर उस प्रकार का चिन्ह पाया जाता है। आखिरकार राजा ने उस व्यापारी को अपने समक्ष लाने का आदेश दिया जिसके

माध्यम से उसी व्यक्ति ने उपहार या वस्त्र दिया था। व्यापारी ने उत्तर दिया कि दक्षिण भारत में सातवाहन नाम का एक शासक है। प्रत्येक वर्ष उसके समक्ष उपहार अथवा कर के रूप में जितने भी वस्त्र इकट्ठे होते हैं वह राजा अपने हाथों को गेंरूवें रंग से रंगकर सभी वस्त्रों पर वैसा चिन्ह अंकित करता है। प्रत्येक स्थिति में किसी पुरूष के द्वारा पहने जाने पर यह चिन्ह वस्त्र के पीछे अंकित रहता है और किसी महिला के द्वारा पहने जाने पर यह चिन्ह उसके वक्षस्थल पर। कनिष्क ने उसी क्षण शपथ लिया कि वह तब तक विश्राम नहीं करेगा जब तक वह सातवाहन नामक राजा के हाथ और पैर नहीं काट दे। इसके लिए उसने दक्षिण भारत के लिए अपने सैनिकों को भेज दिया। जहां पहुंचने के बाद कनिष्क के दूतों को सातवाहन और उसके मंत्री के द्वारा यह कहा गया कि उनके राजा का नाम सातवाहन है जो एक भला शासक है लेकिन वास्तविक राजा वह नहीं है क्योंकि उसकी सभी शक्तियां उसने अपने मंत्रियों को दे रखी है। यह सामाचार मिलने के बाद कनिष्क ने अपने घुड़सवारों और हाथी सेना को दक्षिण भारत में आक्रमण करने के लिए भेज दिया। दक्षिण भारत के लोगों ने अपने राजा सातवाहन को एक गुफा में छुपा लिया और उसके जगह राजा की एक सोने की मूर्ति को शासकों के समक्ष रख दिया। कनिष्क ने इस धोखाधड़ी को समझ लिया और उसने अपने पूर्व में किए पुण्यों की शक्ति से उस सोने के मूर्ति रूपी सातवाहन राजा के हाथ और पैर काट दिए। इसी समय गुफा में छिपाए गए सातवाहन राजा का हाथ और पैर अपने आप ही कट गया। ठीक इसी प्रकार की कथा पूर्व मध्य युगिन स्रोतों में भी उपलब्ध है।

फारसी में लिखे मुजम्मालूत–तवारिख नामक पुस्तक में इसी प्रकार की कथा उपलब्ध है।[21] पुस्तक के जिस अध्याय में इस कथा का उल्लेख है, वह सिंध क्षेत्र के इतिहास से जुड़ा है। इस कथा को लेखक ने हिन्दूवानी भाषा में लिखे गए किसी अन्य पुस्तक से लिया था। उस हिन्दूवानी भाषा की पुस्तक का अरबी और फारसी भाषा में अनुवाद उपलब्ध था। उस पुस्तक का अरबी भाषा में अनुवाद 471 ई. में किया गया था लेकिन हिन्दवानी भाषा की इस मूल पुस्तक का काल स्पष्ट नहीं है।[22] लेकिन निश्चित रूप से यह पुस्तक 1026 ई. के पहले की होगी क्योंकि फारसी भाषा में उपलब्ध अनुवाद उसी वर्ष का है। इस कथा में राजा का नाम हॉल है, जो हॉला भी हो सकता है। वह सिंध क्षेत्र का भी राजा था।[23] उसके द्वारा राज्य से बहुत कीमती वस्त्रों को निर्यात किया जाता था, जिनमें उसके पैर की छाप होती थी। जब उसके पैर की छाप वाला वस्त्र कश्मीर के राजा के पास पहूंचा जिसको उसकी रानी ने पहन रखा था वह राजा क्रोधित हो गया उसे संबंधित व्यापारी से पता चला कि वह हॉला नामक राजा के पैर के निशान है जिसे सुनकर कश्मीर के राजा ने हॉला के हाथों को कटा देने का शपथ लिया। इसलिए कश्मीर के राजा ने हॉला पर आक्रमण किया। हॉला के द्वारा छलपूर्वक युद्ध के मैदान में एक हाथी को छोड़ दिया गया जब कश्मीर के राजा की सेना उस ओर बढ़ी तो उस हाथी का विस्फोट हुआ और उसके आग की लपट में बहुत सारे सैनिक मारे गए कश्मीर के राजा को बाध्य होकर संधि करनी पड़ी और कश्मीर के राजा को हॉला ने बहुत सारे उपहार भी दिए। अपने शपथ को पूरा करने के लिए उसने मोम का एक राजा बनवाकर उसने उसके पैर काट दिए और अपने देश को वह लौट गया।[24] स्पष्ट रूप से दोनों कथाओं में बहुत सी समनाताएं हैं। चीन की कथा फारसी कथा से पहले की है इसलिए हो सकता है कि फारसी कथा में चीन की कथा का कुछ प्रभाव हो। कश्मीर के शासक के रूप में कनिष्क को रेखांकित किया जा सकता है क्योंकि कल्हण की राजतरंगिणी में कनिष्क को कश्मीर का शासक बतलाया गया है।[25] लेकिन इस कथा में विपक्षी राजा को किसी सातवाहन राजा से जोड़ना कठिन है। वैसे दक्कन से प्राप्त कई सातवाहन सिक्कों में केवल सा अंकित है और संभव है कि बाद वाली कथा में इन सभी स्रोतों का प्रभाव रहा हो।[26] सातवाहन नाम का प्राकृत में अनुवाद करने पर सलाहन होता है और हो सकता है कि सलाहन से ही जुड़ा नाम उन सिक्कों पर अंकित हो।[27] इस प्रकार हॉला किसी सातवाहन राजा का नाम भी हो सकता है लेकिन यह भी स्पष्ट है कि सातवाहनों के द्वारा कभी भी संपूर्ण सिंध पर नियंत्रण नहीं किया गया। अस्थाई तौर पर सिंध के कुछ हिस्सों पर सातवाहनों का सैनिक अभियान या राजनीतिक नियंत्रण रहा होगा। इस तथ्य के आधार पर हो सकता है कि बहुत बाद के स्मृतियों में संपूर्ण सिंध क्षेत्र को एक सातवाहन राजा के अधीन कहा गया। सिंध प्रदेश के किसी इतिहासकार के द्वारा ऐसा मान लेना उचित नहीं रहा होगा कि कश्मीर के किसी राजा ने सिंध के किसी राजा को हराया था। इस प्रकार का मिलावट पूर्व मध्य युगीन और मध्य युगीन लेखनों में बहुधा देखी जा सकती है।

अलबेरूनी ने अपने तहकीक–ए–हिन्द में भी इससे मिलती जुलती कहानी का उल्लेख किया है। 1048 ई. में अलबेरूनी की मृत्यु हुई और इस कथा को उसने 1017 से 1030 ई. के बीच के किसी स्रोत से ली होगी।[28] इस कथा में किसी राजा कनिष्क का वर्णन है जिसने पुरूषपुर (पेशावर) में एक विहार का निर्माण करवाया था। कनोज (कन्नोज) के राजा ने उसको एक कीमती वस्त्र भेंट किया लेकिन उस वस्त्र पर किसी पैर का निशान था कनिक ने उसको अपना अपमान समझा इसलिए कनिक ने अपनी सेना लेकर कन्नौज के राजा पर आक्रमण कर दिया। कन्नौज का राजा कनिक के आक्रमण को झेलने के लिए सक्षम नहीं था इसलिए उसके मंत्री के द्वारा एक छल रचा गया उस मंत्री ने अपनी नाक काट कर कनिष्क से मुलाकात की और कहा कन्नौज के राजा ने उसकी यह गति की है। उसने कन्नौज तक पहुंचने के लिए कनिष्क को मरूभूमि से लेने वाले एक कम दूरी वाले मार्ग से जाने को कहा। उसी मार्ग में छिपकर कन्नौज के राजा और उसकी सेना बैठी हुई थी। मरूभूमि में कनिष्क की सेना को पानी की कमी का सामना करना पड़ा तब कनिष्क को पता चला कि उस मंत्री के द्वारा छल किया गया है लेकिन कनिष्क ने मरूभूमि में अपने भाले को फेंककर पानी की व्यवस्था कर ली। मंत्री समझ गया कि इतने शक्तिशाली सम्राट के साथ अब छल नहीं किया जा सकता है। उसने कनिष्क से कन्नौज के राजा को क्षमा कर देने का आग्रह किया। कनिष्क ने उसको मुक्त कर दिया और कहा कि उसके स्वामी को पहले ही सजा मिल चुकी है इसके बाद कनिष्क वापस लौट गया। जब मंत्री वापस अपने राजा के पास पहुंचा तब उसे पता चला कि जिस समय पानी निकालने के लिए कनिष्क ने मरूभूमि पर अपना भाला फेंका था उसी समय कन्नौज के राजा के हाथ और पैर कटकर अलग हो गए थे।[29] निश्चित रूप से पेशावर में कनिष्क के द्वारा एक विहार का निर्माण करवाया गया था जिसकी जानकारी अभिलेखों एवं साहित्यिक स्रोतों से मिलती है।[30] अलबेरूनी ने इस आख्यान को बहुत बाद में सुना था और इसलिए उसने इससे मिलती–जुलती अन्य कथाओं के आधार पर वास्तविक कनिष्क का तो जिक्र किया लेकिन सातवाहन शासकों के स्थान पर कन्नौज राजा का उल्लेख किया। अलबरूनी के भारत आगमन के समय कन्नौज एक बहुत महत्वपूर्ण शहर था और हो सकता है कि सातवाहनों का इतिहास उस समय तक अपेक्षाकृत धूमिल हो चुका था और किसी भी रोचक कथा की प्रस्तुति के लिए उसने कन्नौज को कथा में जोड़ना पूर्ववर्ती सातवाहनों की अपेक्षा अधिक लाजमी समझा हो।[31]

उपरोक्त सभी कथाओं में कुछ रोचक समानताएं स्पष्ट हैं। दो शासको के बीच वस्त्र पर छपे निशान के कारण संघर्ष हुआ है। इसके अतिरिक्त दोनों राजाओं में से कम से कम एक राजा कनिष्क सभी कथानकों में विद्‌यमान है। इनमें से दो में कनिष्क का नाम लिया गया है और तीसरे में कश्मीर के राजा का जिक्र हुआ है जो राजतरंगीणी में कनिष्क के कश्मीर पर शासन करने से मेल खाता है। दूसरे राजा के संबंध में सातवाहन राजा का जिक्र किसी न किसी रूप में हुआ ही है। इन सभी तथ्यों से एक निष्कर्ष यह अवश्य निकलता है कि वे सभी कथाएं एक ही मूल कथा से निकली है और चूँकि 650 ई. में इस कथा का चीनी संस्करण सभी कथाओं में सबसे पुराना है उसको ही मूल कथा अथवा मूल कथा से मिलते–जुलते यानी एक संबंधित कथा के रूप में स्वीकार किया जा सकता है इसलिए इन कथाओं की जो मूल कथा रही होगी वह निश्चित रूप से इन्हीं दो सम्राटों से संबंधित होगी–कनिष्क और सातवाहन।[32] अलबरूनी का कनिक निश्चित रूप से कनिष्क ही रहा होगा और कनिष्क से जुड़ी कथा ही चीनी संस्करण में वर्णित है।[33] सातवाहन राजवंश एक प्रमुख ऐतिहासिक राजवंश रहा और उसके दो या तीन शासकों के द्वारा सातवाहन नाम का प्रयोग भी किया गया।[34] किसी भी वंश के पहले शासक के नाम को उपनाम के रूप में जोड़ने की प्रथा रही है। इन शासकों के साथ क्षेत्रीय नामकरण का भी प्रचलन रहा है।[35] चीनी स्रोतों में सातवाहन नाम का उपयोग सातवाहनों के परिवार से जुड़े किसी व्यक्ति का भी हो सकता है।

निष्कर्ष

चीनी भाषा में शामिल होने के पहले भी कनिष्क नाम के और सातवाहन नाम के इन दो राजाओं की कथा उत्तर भारत में प्रचलित रही होगी। जैसा कि प्रायः सभी किवंदतियों में कहा जा सकता है। यह कथा भी कही–न–कही ऐतिहासिक तथ्यों पर बनी होगी। कथा को रोचक बनाने के लिए इसमें कुछ आश्चर्यजनक चमत्कारों को बाद में जोड़ दिया गया होगा। यह कथा प्रारंभिक मध्य युग तक भिन्न–भिन्न संस्करणों में कही जाती होगी।

मूल कथा में बाद के लेखकों के द्वारा अपनी रूचि के अनुसार या मौलिक घटना में समावेश करने वाली स्वभाविक त्रुटियों के कारण इसका रूप दूसरा होता चला गया। एक ऐतिहासिक तथ्य जो अनिवार्य रूप से निकाला जा सकता है वह यह है, कि कनिष्क और सातवाहन के बीच किसी प्रकार का संघर्ष रहा होगा जो उत्तर भारत में कालांतर में बनने वाली कथाओं का रूप ले सका। यह भी तय है कि इस पूरी कथा को ऐतिहासिक तथ्य के रूप में स्वीकार नही किया जा सकता है। वैसे भी इतिहास में प्रमुख व्यक्तियों से जुड़ी बहुत सारी घटनाओं का उल्लेख किया जाता रहा है।

संदर्भ सूची

1. सरकार, डी. सी. (1965) *इंडियन एपिग्राफी,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पृ. 258।
2. गोपालाचारी, के. (1941) *अर्ली हिस्ट्री ऑफ दि आंध्रा कंट्री,* यूनिवर्सिटी ऑफ मद्रास, मद्रास, पृ. 54–55।
3. हुल्टज, ई. (सम्पादक), (1905) *एपिग्राफिया इंडिका,* भाग VIII, ऑफिस ऑफ दि सुपेरिटेन्डेन्ट ऑफ गवर्नमेंट प्रिंटिंग्स, कलकत्ता, पृ. 60।
4. चौधरी, हेमचन्द्र राय (1932) *स्टडीज इन इंडियन एंन्टीक्यूटीज,* यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, कलकत्ता, पृ. 114–115।
5. घोष, हरि चरण (1930) क्रोनोलॉजी ऑफ दि वेस्टर्न क्षत्रपाज एण्ड दि आन्ध्राज, *इंडियन हिस्ट्री क्वार्टरली* भाग–VI, पृ. 751।
6. सरकार, डी. सी. (सम्पादक) (1942) सेलेक्ट इंस्क्रिप्शन बीयरिंग ऑन इंडियन हिस्ट्री एण्ड सीविलाइजेशन, भाग–1, यूनिवर्सिटी ऑफ कलकता, पृ. 172।
7. क्रिंडल, मैक (सम्पादक) (1885) *एंशियेन्ट इंडिया एज डिस्क्राइब्ड बाय टॉलेमी,* ट्रूबनर एण्ड कम्पनी, लंदन, पृ. 140।
8. मुखर्जी, बी. एन. (1967) *स्टडीज इन कुषाणा जेनियलॉजी एण्ड क्रोनोलोजी,* भाग–1, संस्कृत कॉलेज, कलकता, पृ. 24।
9. मुखर्जी, बी. एन. (1967) *स्टडीज इन कुषाणा जेनियलॉजी एण्ड क्रोनोलोजी,* भाग–1, संस्कृत कॉलेज, कलकता, पृ. 25।
10. उपरोक्त, पृ. 183।
11. स्टेन कोनोव (सम्पादक), (1969) *कॉरपस इंस्क्रिप्शनम इंडिकारम,* खण्ड–II, भाग–1, खरोष्ठी इंस्क्रिप्शन विथ दि एक्सेप्शन ऑफ दोज ऑफ अशोका, इण्डोलोजिकल बुक हाउस, वाराणसी, पृ. 141।
12. उपरोक्त।
13. *दि इंपेरियल गजेटियर ऑफ इंडिया* (1931) भाग XXVI, क्लेरेन्डन प्रेस, ऑक्सफोर्ड, पृ. 38।
14. मुखर्जी, बी. एन. (1916) *कनिष्क–1 एण्ड दि डेक्कन ए स्टडी इन दि प्रॉब्लम ऑफ रिलेशनशिप,* पिलग्रीम पब्लिकेशन, कलकत्ता, पृ. 63।
15. उपरोक्त।
16. उपरोक्त।
17. उपरोक्त।
18. उपरोक्त, पृ. 64।

19. उपरोक्त।

20. उपरोक्त।

21. इलियट, एच. एम. एण्ड डाउसन, जे. (1867) *दि हिस्ट्री ऑफ इंडिया एज बाई इट्स आवन हिस्टोरियन्स,* भाग–1, किताब महल प्रा.लि., दिल्ली, पृ. 100–101।

22. उपरोक्त, पृ. 101।

23. उपरोक्त, पृ. 107।

24. उपरोक्त, पृ. 106–108।

25. रैपसन, ई. जे. (1908) कैटेलॉग ऑफ दि क्वायंस ऑफ दि आन्ध्रा डायनेस्टी, दि वेस्टर्न क्षत्रप दि त्रिकुटा डायनेस्टी एण्ड दि बोधि डायनेस्टी, ट्रस्टी ऑफ ब्रिटिश म्यूजियम, लंदन, पृ. 45।

26. पार्जिटर, एफ. ई. (सम्पादक), (1913) *दि पुराना टेक्स्ट ऑफ दि डायनेस्टीज ऑफ दि कलिएज,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटि प्रेस, लंदन, पृ. 41।

27. सचाऊ, ई. सी. (1888) *अलबेरूनीज इंडिया,* भाग– 1, केगन पॉल, ट्रेंच, ट्रूबनर एण्ड कं., लंदन, पृ. 16।

28. सचाऊ, ई. सी. (1910) *अल्बेरूनीज इंडिया,* भाग–2, केगन पॉल, ट्रेंच, ट्रुबनर एण्ड कं., लंदन, पृ. 11–13।

29. मुखर्जी, बी. एन. (1964) शाह–जी–की–ढ़ेरी कास्केट इंस्क्रिप्शन, *ब्रिटिश म्यूजियम क्वार्टरली,* भाग xxviii, पृ. 41–42।

30. मजूमदार, आर. सी. (सम्पादक) (1964) *दि एज ऑफ इंपेरियल कन्नौज,* भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, पृ. 38।

31. स्टीन, एम. ए. (सम्पादक) (1900) *कल्हनाज राजतरंगिणी,* भाग–1, आर्किबाल्ड कांस्टेबल एण्ड कम्पनी लि0, बेस्टमिंन्स्टर, पृ. 15।

32. मुखर्जी, बी. एन. (1916) *कनिष्क–1 एण्ड दि डेक्कन ए स्टडी इन दि प्रॉब्लम ऑफ रिलेशनशिप,* पिलग्रीम पब्लिकेशन, कलकत्ता, पृ. 361।

33. बहलर, जी. (1961) *इंडियन स्टडीज पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट,* ए मित्रा सेन्सस, कलकत्ता, पृ. 65–66।

34. बर्गेस, जैस (1892) *एपिग्राफिया इंडिका,* भाग–1, दि सुपेरिटेन्डेन्ट ऑफ गवर्नमेंट प्रिंटिंग, कलकत्ता, पृ. 06।

35. उपरोक्त।

––==00==––